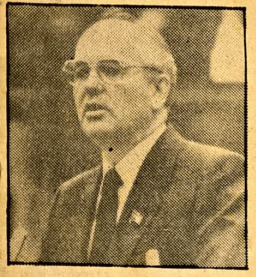
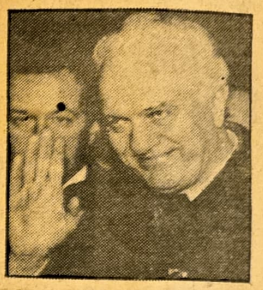
अंतरराष्ट्रीय

सोवियत संघः क्या गोर्बाचेव तानाशाह बनना चाहते हैं



सारी निगाहें अभी या तो खाड़ी संकट में आने वाले संभावित मोड़ का गवाह बनने के लिए उस ओर लगी हुई हैं या फिर पेरेस्त्रोइका और ग्लासनोस्त से गुजर रहे गोर्बाचेव के सोवियत संघ की ओर। सोवियत विदेश मंत्री एडुवर्ड शेवर्दनाजे के 'अचानक' इस्तीफे ने दुनिया की निगाहों को एक बार फिर सोवियत संघ की ओर टकटकी लगाकर देखने के लिए मजबूर कर दिया कि वहां क्या कुछ हो रहा है और आगे क्या कुछ होने वाला है। हालांकि गोर्बी के दाहिने हाथ के रूप में कभी रहे शेवर्दनाजे के इस्तीफे से बहुत ज्यादा आश्चर्यचकित होने की जरूरत नहीं दिखाई देती। उनकी वापसी फिर होगी और पहले से ज्यादा बड़ी हस्ती के रूप में यह लगभग तय है। गोर्बाचेव पहले की तरह मजबूत हैं और आगे भी रहेंगे। हालांकि अभूतपूर्व आर्थिक तंगी उनके लिए परेशानी का सबब बनी हुई है। ताजा घटनाओं में गोर्बी के खासुलखास गेन्नाडी यानेव सोवियत संघ के उपराष्ट्रपति चुन लिये गये हैं और इसे गोर्बी की एक और विजय माना जा रहा है।



और आखिरकार सोवियत विदेशमंत्री एडुअर्ड शेवर्दनाद्जे ने अपने पद से इस्तीफा दे ही डाला (२० दिसम्बर)। यह अचानक नहीं हुआ है, सोवियत राजनीति में पैठ रखने वालों की राय में काफी समय से इसकी संभावना थी, लेकिन व्यक्त नहीं की जा रही थी।

सोवियत राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव बखूबी समझ रहे हैं कि किन परिस्थितियों में उनके विदेशमंत्री ने इस्तीफा दिया है, इसलिए बिना कोई टिप्पणी किये उन्होंने श्री शेवर्दनाद्जे से तब तक अपने पद पर कार्य करते रहने का आग्रह किया है जब तक किसी अन्य व्यक्ति को विदेशमंत्री नियुक्त नहीं कर दिया जाता। श्री गोर्बाचेव कदाचित उस दिन की प्रतीक्षा में हैं जब अपने देश के बारे में हर प्रकार के फैसले लेने की स्थिति में वे होंगे और श्री शेवर्दनाद्जे भी पहले की तरह कदम-से-कदम मिलाकर उनके साथ चलेंगे। इसके लिए वे कट्टरपंथियों (साम्यवादी) को दरकिनार करने की जुगाड़ में हैं।

एडुअर्ड शेवर्दनाद्जे सोवियत सरकार की उन चन्द गिनी-चुनी हस्तियों में से हैं जिन्होंने इस सदी का बहुचर्चित व्यक्ति और अपने नव सुधारवादी लहर 'पेरेस्त्रोइका' को न केवल पूर्वी यूरोप, बल्कि विश्वव्यापी करने में मिखाइल गोर्बाचेव के दाहिने हाथ के रूप में काम किया। इसलिए विदेशमंत्री पद से उनके इस्तीफे ने पूरे संसार में खलबली मचा दी है। खासकर पूर्वी यूरोप के देश तो और भी चिंतित हो गये हैं जहां की जनता को खुली हवा में सांस लेने का माहौल प्रदान करने का श्रेय इसी जोड़ी को है।

सबसे पहले जर्मन चांसलर हेल्मुट कोल ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। उन्होंने कहा कि श्री गोर्बाचेव के नेतृत्व वाली व्यवस्था अगर किसी कारणवश भंग होती है तो इसका असर जर्मनी पर पड़े बिना नहीं रहेगा जिन्होंने इसे एक संप्रभु राष्ट्र के रूप में मान्यता देने में सबसे ज्यादा तत्परता दिखायी। श्री कोल का इशारा उस ओर है जब जर्मनी एकीकरण की प्रक्रिया के दौर में था। श्री गोर्बाचेव बार-बार यह अवश्य कहते रहे कि एकीकृत जर्मनी को नैये न रहकर बिल्कुल तटस्थ रहना चाहिए। जबकि वे अच्छी तरह जान रहे थे कि पश्चिम के देश उनकी सलाह को गंभीरता से नहीं ले रहे हैं, लेकिन उसके बावजूद उन्होंने एकीकरण के मार्ग में खुलकर सहयोग दिया। हालांकि इस पर सोवियत सेनाध्यक्ष और सुरक्षा सलाहकार को आपत्ति थी जिसकी गोर्बाचेव ने परवाह नहीं की।

दरअसल बात यह हुई है कि समूचे पूर्वी यूरोप में नयी क्रांति का बिगुल बजाने वाले सोवियत राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव अपने देश की डावांडोल आर्थिक हालत को लेकर खुद फंस गये हैं और उन्हें लग रहा है कि पश्चिम की तरह की व्यवस्था (जिसे द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद समाजवादी खेमे ने ही पूंजीवादी कहा था) अपनाये बिना इसमें सुधार कर पाना मुश्किल है, लेकिन उनके मार्ग में रोड़े अटकाने वाले मुट्ठी भर कट्टर साम्यवादी हैं जो अभी भी स्टालिन के जमाने का शासन बरकरार रखने के पक्ष में हैं। पिछले कुछ दशकों में अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक मंच पर आये क्रांतिकारी वैचारिक बदलाव और तेजी से बदलती परिस्थितियों के मुताबिक पैदा होते जनतांत्रिक माहौल-से या तो वे बेखबर हैं अथवा सब कुछ जानते हुए भी सारी समस्याओं का हल गोलियों में ढूंढने की अपनी फूटी डफली बजाये रखना चाहते हैं। निरंकुशता के हिमायती ऐसे ही लोग प्रधानमंत्री निकोलाई रिझकोव के नेतृत्व में यह प्रचार करते फिर रहे हैं कि श्री गोर्बाचेव तनाशाह बनना चाहते हैं, इसलिए उनके हाथ में असीमित अधिकार नहीं दिये जाने चाहिए। शायद वे भूल रहे हैं कि श्री गोर्बाचेव हाल में बने अन्य सोवियत शासकों से हर मायने में बिल्कुल अलग-थलग हैं। जोसेफ स्टालिन का तो जिक्र करना ही व्यर्थ होगा, लेकिन अगर ब्रेजनेव पोदगोर्बी और कोसिगिन का भी जमाना होता तो शायद वे इस तरह खुलकर बोल भी नहीं सकते थे।

सोवियत संघ में इतनी आर्थिक तंगी इस दशक में पहले कभी नहीं देखी गयी। आवश्यक वस्तुओं की किल्लत का आलम यह है कि पाव रोटी और मक्खन तक के लिए पंक्तिबद्ध होना पड़ रहा है। लोग दाने-दाने को मोहताज हो रहे हैं और जो सोवियत संघ कभी भारत को अनाज भेजा करता था आज भारत ने ही उसे ३० करोड़ की खाद्य सामग्री भेजी है। दूसरी ओर बढ़ते क्षेत्रीय तनाव ने अब अलगाववाद का रूप ले लिया है और सोवियत परिसंघ में शामिल गणराज्यों ने केन्द्रीय नेतृत्व के खिलाफ खुली बगावत कर दी है। इन गणराज्यों ने एक ही साथ आंतरिक और बाह्य स्वायत्ता की मांग शुरू कर दी है तथा बाल्कन प्रदेशों ने तो आखिर स्वायत्तता देने को मजबूर कर ही दिया।

कट्टर साम्यवादी (जिनके पीछे सोवियत खुफिया एजेंसी के.जी.बी. का हाथ है) चाहते हैं कि परंपरा के मुताबिक सख्ती से इन आन्दोलनों को कुचल दिया जाये दमन नीति के अभ्यस्त जो हो चुके हैं। श्री गोर्बाचेव के उदारवाद को वे अमरीका-परस्त और सोवियत चर्चों का प्रभाव मानते हैं।

श्री गोर्बाचेव अपने १७ गणराज्यों को सोवियत संघ में मिलाकर अवश्य चलना चाहते हैं लेकिन आंतरिक स्वायत्तता देने के पक्ष में हैं। उनकी राय में तमाम गणराज्यों के शासक अपनी घरेलू समस्याओं के समाधान के मामले में कोई भी निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र होंगे। उनके सामने परिस्थितियां भी बड़ी विचित्र हैं। अपनी संसद (कांग्रेस ऑफ डिपुटीज) में सबसे ज्यादा समर्थन होने के बावजूद श्री गोर्बाचेव कट्टर साम्यवादियों को साथ लेकर चलना चाहते हैं। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि वे कट्टरपंथियों के आगे झुक गये हैं जैसा कि कुछ दिन पहले प्रचारित किया गया जब उन्होंने पूर्व के.जी.बी. (कोमिटेट गोसुदस्तिवेन्नोय बीजोपास्नोस्ती) अध्यक्ष को गृहमंत्री बनाया। के.जी.बी. आज भी सारी समस्याओं का समाधान बंदूक से निकालने के पक्ष में है। वर्तमान के.जी.बी. अध्यक्ष व्लादीमिर क्रियुकोव बार-बार कह रहे हैं कि बिना खून-खराबा के देश में सुव्यवस्था कायम नहीं हो सकती। विश्वस्त सूत्रों के अनुसार उनके वक्तव्यों से भी श्री शेवर्दनाद्जे चिढ़ गये थे, इसलिए उनके इस्तीफे की पृष्ठभूमि तैयार करने के पीछे भी के.जी.बी. का हाथ है, लेकिन श्री गोर्बाचेव ने के.जी.बी. के दबाव में आके श्री शेवर्दनाद्जे को हट जाने का इशारा किया हो, ऐसा नहीं लगता। यह बात सही है कि वे अपने विदेशमंत्री को उपराष्ट्रपति बनाना चाहते थे और उन्हें पूरा यकीन था कि संसद से भी मंजूरी मिल जायेगी लेकिन कट्टरपंथियों को खुश करने के चक्कर में शेवर्दनाद्जे भले न बन पाये। संसद से नये संवैधानिक अधिकार पाने के बाद जिस व्यक्ति (गेनाडी यानेव) को श्री गोर्बाचेव ने अपना उपराष्ट्रपति मनोनीत किया वे भी ट्रेड यूनियन नेता हैं और पेरेस्त्रोइका के समर्थक हैं। सोवियत संविधान में प्रधानमंत्री और उपराष्ट्रपति का दर्जा बराबर है।

प्लेटो से लेकर मार्क्स और लेनिन तक का साम्यवाद किस तरह व्यावहारिक जीवन में खोखला साबित हुआ, वह अब किसी से छिपा नहीं है। मार्क्सवाद क्रांति के सिद्धांत तक ठीक है। इस विचारधारा के मुताबिक जब कोई व्यवस्था कायम होगी तो राज्य नाम की कोई चीज रह नहीं जायेगी और सबकुछ एक निरंकुश तानाशाह (जिसे 'सर्वहारा' का नाम देकर उसकी दमन नीति को अनदेखा नहीं किया जा सकता) के हाथ में होता है। प्लेटो का साम्यवाद तो नागरिकों के बच्चों को भी राज्य की संपत्ति मानता है। यहां तक कि बच्चे की पैदाइश भी राज्य की देखरेख में होगा।

आज का समाज अपने चारों तरफ बिल्कुल उदार वातावरण चाहता है। इतने व्यापक फेरबदल के बावजूद सच्चाई को नकारना खुद अपने और अपने परिवेश के साथ बेमानी है। लाख शुक्र है श्री गोर्बाचेव का, जिन्होंने जॉर्ज ऑरवेल द्वारा अपनी बेस्टसेलर '१९८४' में की गयी भविष्यवाणी गलत साबित कर दी, जिसमें उन्होंने साम्यवादी निरंकुशता की उस चरम परिणति की कल्पना की थी जब लोगों की नितान्त प्राइवेट बातें भी सरकार की जानकारी में होंगी।

अमरीका, फ्रांस, जर्मनी आदि सभी पश्चिमी देश सोवियत संघ में अपनी पूंजी लगाने को तैयार हैं। लेकिन वे चाहते हैं श्री गोर्बाचेव अपनी नीतियों को जरा और उदार करें। सोवियत संसद ने निजी स्वामित्व को मंजूरी दे दी है। इतना ही नहीं, गोर्बाचेव को अभी तक संसद से भरपूर समर्थन मिलता आया है, लेकिन वे सारी समस्याओं का समाधान अपने ढंग से करना चाहते हैं और इसके लिए जरूरी है कि राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय मामलों में निर्णय लेने का उन्हें पूरा अधिकार हो। इसे अगर तानाशाह बनने की प्रक्रिया करार दी जाये तो यह तो अपना-अपना नजरिया है। शायद सोवियत राष्ट्रपति को यह बताना जरूरी नहीं है कि अमरीका और सोवियत संघ एक-दूसरे के प्रतिद्वंद्वी रहे हैं। उसके बावजूद श्री गोर्बाचेव ने कुवैत से सम्बन्धित अमरीकी नीति का न केवल समर्थन किया बल्कि यहूदियों को इस्राइल जाने की छूट दी जिनके प्रति अभी भी ईसाइयों के मन में खुंदक है। यह सिर्फ समय का तकाजा है, वरना सोवियत संघ की बारह बजती हालत का अमरीकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश नाजायज फायदा उठा सकते थे। उल्टे वे हर तरह की मदद कर रहे हैं।

वो दिन दूर नहीं, जब श्री शेवर्दनाद्जे पहले से ज्यादा महत्वपूर्ण पद पर वापस लौटेंगे और दमन नीति के हिमायतियों को यह भी नहीं भूलना चाहिए कि श्री गोर्बाचेव खून की नदियां बनाने वाले तानाशाह नहीं हो सकते तथा सोवियत जनता को अभी गोर्बाचेव की ही जरूरत है, स्टालिन की नहीं।

शशिधर खां

